शुभ गुरुपूर्णिमा के सम्मान में
महीने भर का सत्संग

२६ जून, २०२२

आत्मीय पाठक,

यदि आप इसे कोई नाम दे सकें, या इसके लिए एक रंग निर्धारित कर सकें, या इसे एक ध्वनि प्रदान कर सकें, तो आप इसका वर्णन कैसे करेंगे कि श्रीगुरुमाई के जन्मदिवस की आभा में सराबोर होकर कैसा महसूस हुआ? आप इसका वर्णन किस प्रकार करेंगे कि जन्मदिन के आनन्द व इसके महत्त्व से उल्लसित व आह्लादित होकर आपको कैसा लग रहा है; और यह जानकर कैसा लग रहा है कि आपके जीवन में या आपके देश में या फिर पूरे विश्व में चाहे जो कुछ हो रहा हो, फिर भी श्रीगुरु की कृपा का यह प्रवाह निश्चित रूप से विद्यमान है, और यह अनवरत आपकी ओर केवल बहता ही रहेगा? शुक्रवार, २४ जून को प्रातःकाल में, सूर्योदय से लगभग एक घण्टा पूर्व, आकाश में पाँच ग्रह स्पष्टतः दिखाई दे रहे थे, जो सूर्य से अपनी दूरी के अनुसार एक आर्क बनाए हुए, संरेखित थे। अट्ठारह वर्षों में इस तरह की यह पहली घटना थी, मानो इस घटना ने ग्रहों की संरचना की संकल्पना के लिए एक शरारत भरी चुनौती देकर उस संकल्पना को पीछे छोड़ दिया हो। मैंने अकसर यह महसूस किया है कि आकाश सर्वज्ञ है, वह सब कुछ जानने वाला है। जी हाँ, कुछ था ज़रूर जो सीध में आ रहा था और आ रहा है।

पूरे जून माह में ये ग्रह एक-दूसरे की ओर लगातार बढ़ रहे हैं, और २४ तारीख़ को चन्द्रमा भी इनसे जुड़ गया, जो उनके बीच के मार्ग के ठीक मध्य में स्थित था। सूर्य और चन्द्रमा के बीच में थे, बुध [मर्क्युरी] और शुक्र [वीनस] ग्रह; हाँ निस्सन्देह, वीनस यानी शुक्र 'प्रेम का ग्रह' कहलाता है। तो शुक्रवार के दिन—अर्थात् शुक्र ग्रह को समर्पित दिन—आसमान ने प्रेम को सोने-चाँदी के थाल में सजा रखा था। यह खगोलीय रेखा सिद्धयोग पथ पर हमारी अपनी दिशा को प्रतिबिम्बित कर रही थी जब हम वर्तमान क्षण के महत्त्व की सराहना करते हैं और आने वाले क्षण में क्या होने वाला है इसकी प्रत्याशा करते हैं—और हम यह पहचानते हैं कि इन सब के मूल में है वह प्रेम जो सभी को जोड़ देता है, अनदेखे गुरुत्वाकर्षण बल के समान यह हमारे वर्तमान को हमारे भविष्य से जोड़ता है।

सिद्धयोग पथ पर हम प्रकाश से प्रकाश की ओर, प्रेम से और अधिक प्रेम की ओर बढ़ते हैं ।

शुभ गुरुपूर्णिमा।

अपने आप से ज़ोर-से कहें : "शुभ गुरुपूर्णिमा।"

और अब, एक बार फिर से कहें। "शुभ गुरुपूर्णिमा" कहने के बाद अपना नाम जोड़कर कहें।

इसके बाद, बार-बार, एक या दो बार या फिर जितनी बार भी आप चाहें इन शब्दों को स्वयं से कहते रहें। ये शब्द पावन हैं।

जब मैं "शुभ गुरुपूर्णिमा" कहती हूँ, मैं सशक्त महसूस करती हूँ—मैं अपने आपको उसकी शक्ति से पूरित महसूस करती हूँ जो शुभ है। मैं श्रीगुरु की शक्ति से तथा आने वाली पूर्णिमा के चुम्बकीय खिंचाव से स्वयं को शक्तिपूरित महसूस करती हूँ। एक बार पुनः मैं आपको शुभकामनाएँ देती हूँ, "शुभ गुरुपूर्णिमा।"

इस वर्ष गुरुपूर्णिमा १३ जुलाई को है, और हम औपचारिक तौर पर अपना उत्सव मनाना इस माह के आरम्भ में शुरू करेंगे। निश्चित ही, यह 'आनन्दमय जन्मदिवस' के महिमामय माह के ठीक बाद आ रहा है—यानी ऐसे माह के बाद जो अपने साथ सचमुच, सद्‌गुण वैभव के वृक्ष के फलों को ले आया है, हमारे अन्तर में और हमारे आस-पास भी। और फिर इसके उपरान्त, जुलाई माह के उत्तरार्ध में—श्रीगुरुमाई के जन्मदिवस के ठीक एक माह बाद—२४ जुलाई को हम भगवान नित्यानन्द की चान्द्र पुण्यतिथि मनाएँगे।

पुण्यतिथि क्या है? 'पुण्यतिथि' अपने आप में वह शब्द है जो विशेषरूप से सन्तों के सन्दर्भ में प्रयुक्त होता है जब वे अपनी भौतिक देह त्यागकर ब्रह्माण्डीय चेतना में विलीन होते हैं। 'पुण्य' का अर्थ है, 'शुभ, मंगलमय, पावन, सद्‌गुणसम्पन्न' और 'तिथि' का अर्थ है, 'दिन' या 'दिनांक।' श्रीभगवद्‌गीता में, भगवान श्रीकृष्ण अपने शिष्य अर्जुन को एक उपमा द्वारा समझाते हैं कि मृत्यु क्या है; वे कहते हैं कि यह एक व्यक्ति द्वारा अपने पुराने वस्त्र त्यागकर नए वस्त्र धारण करने के समान है।[१] इसी प्रकार भगवान नित्यानन्द की पुण्यतिथि वह दिन है जब उन्होंने अपनी भौतिक देह त्यागकर उस विशाल, अवर्णनीय, फिर भी मूर्त दिव्यता में प्रवेश किया जिससे यह ब्रह्माण्ड बना है।

इसलिए, जून के इस समय से लेकर जुलाई के पूरे माह सिद्धयोग पथ पर एक बाहुल्य है। और यह बाहुल्य बढ़ता ही रहेगा; इसके बारे में कुछ है जो बिलकुल सटीक लगता है। इस पथ पर मैंने यह देखा व अनुभव किया है कि जैसे-जैसे एक व्यक्ति की साधना आगे बढ़ती जाती है, वह अच्छाई से महानता की ओर बढ़ता जाता है—और जी हाँ, महानता से, *और भी अधिक* महानता की ओर बढ़ता जाता है।

सिद्धयोग की एक मुख्य सिखावनी है कि ईश्वर, श्रीगुरु और आत्मा एक ही हैं। यह ऐसी सिखावनी है जिसने जीवनभर मुझे आकृष्ट किया है। चाहे मैंने इस पर कितना ही चिन्तन किया हो, चाहे कितनी ही बार मैं इतनी सौभाग्यशाली रही हूँ कि मुझे इसमें निहित परम सत्य के प्रत्यक्ष अनुभव हुए हों, मेरे लिए यह सिखावनी हमेशा गूढ़ ही रह जाती है, जितना इसे जाना जा सकता है, यह उतनी ही अज्ञात होती जाती है। सद्भाग्य से, इसका अर्थ यही है कि इस सिखावनी का आगे भी अन्वेषण करने की, इसकी गहराई में उतरने की, इसके कई चित्ताकर्षक आयामों को बारीकी से देखने की असीमित सम्भावना है, ताकि हमारी साधना और भी फल-फूल सके, समृद्ध हो सके।

ऐसा हम कई तरीक़ों से कर सकते हैं और एक तरीक़ा है, गुरुपूजा। तथापि, यहाँ भी कई सम्भावनाएँ हैं क्योंकि श्रीगुरु की पूजा के कई रूप हो सकते हैं। यदि आप सदेह गुरु के सान्निध्य में हैं तो आपके पास प्रत्यक्षरूप में श्रीगुरु की पूजा करने का अवसर होता है। यदि ऐसा नहीं है तो आपके पास आपके ही द्वारा रचित पूजा-वेदी होती है, जिसमें श्रीगुरु के चित्र या उनकी प्रतिमा होती है और आपके द्वारा चुनी हुई सभी पूजा-सामग्री होती है। 'मानसपूजा' भी होती है जिसमें आप यह मानस-चित्रण करते हैं कि आप श्रीगुरु की पूजा कर रहे हैं; आप कल्पना करते हैं कि आप किन-किन तरीक़ों से श्रीगुरु का वन्दन-पूजन व उनका सम्मान करेंगे और किस प्रकार उनके प्रति अपनी भक्ति अभिव्यक्त करेंगे, और ऐसा करते हुए आप अपनी अन्तर-स्थिति को, अपने अन्तर-भाव को रूपान्तरित करते हैं। आप उसे उन्नत करते हैं। आप अपने मन को उसमें आसीन करते हैं जो स्वर्णिम है और आप स्वयं भी स्वर्णिम बन जाते हैं।

अब, श्रीगुरु की पूजा करने का क्या अर्थ है? वे कौन हैं और वह क्या है जिसकी हम पूजा कर रहे हैं? और यह पूजा हमें कहाँ ले जाती है? चूँकि हम इस वर्ष श्रीगुरुगीता पाठ की पचासवीं वर्षगाँठ मना रहे हैं, मैं इन प्रश्नों के उत्तर के लिए इस पावन स्तोत्र की मदद लेना चाहूँगी। नौवें श्लोक में आदिगुरु, भगवान शिव अपनी प्रिया, देवी पार्वती को श्रीगुरु के स्वरूप के विषय में समझाते हैं :

> गुरुर्बुद्ध्यात्मनो नान्यत् सत्यं सत्यं न संशयः।
> तल्लाभार्थं प्रयत्नस्तु कर्तव्यो हि मनीषिभिः॥

> श्रीगुरु चेतन या प्रबुद्ध आत्मा से भिन्न नहीं हैं।
> यही सत्य है, यही सत्य है, इसमें कोई संशय नहीं है।
> अतः मनीषियों को, बुद्धिमान जनों को श्रीगुरु की प्राप्ति का प्रयत्न करना चाहिए।[२]

इसलिए, जब हम गुरुपूजा करते हैं, हम अपनी ही आत्मा की पूजा कर रहे होते हैं। हम सभी चीज़ों की आत्मा की, सर्वात्मा की [जिसे हम भगवान भी कह सकते हैं] पूजा कर रहे होते हैं। वस्तुतः, एक पूरी उपनिषद् ही है—आत्मपूजा उपनिषद्—जिसमें यही वर्णन किया गया है कि बाह्य पूजा का प्रत्येक पहलू परम आत्मा के किसी गुण या विशेषता से सम्बन्धित है और पूजा करने के साथ-साथ हम उस गुण का भी सम्मान कर रहे होते हैं। इस शास्त्र के अनुसार, उदाहरण के लिए, फूल चढ़ाना आत्मा के सौन्दर्य और प्रकाश को पहचानने व उसका सम्मान करने का माध्यम है; अगरबत्ती या धूप जलाने से अन्तर-निहित अग्नि का सम्मान किया जाता है; प्रदक्षिणा करना अन्तरात्मा की प्रशान्ति से उदित होनेवाली क्रियाशीलता के प्रति आदर व्यक्त करना है।

यह उपनिषद् और इसी के तरह अन्य शास्त्रग्रन्थ व शिक्षाएँ ये समझाती हैं कि पूजा करने के विषय में वह क्या है जो इतना प्रभावशाली और दिलचस्प है, जैसे कि, किस प्रकार बाहरी अनुष्ठान या पूजा-विधियाँ हमें गहरे आन्तरिक स्तर पर, उस सच्चाई के निकट ले आती हैं जो हम हैं।ईश्वर, श्रीगुरु और आत्मा के बीच के सम्बन्ध की हमारी जो भी बौद्धिक समझ हो, उसे हमारी पूजा अनुभव के लोक में, सजीव, जीते-जागते ज्ञान के लोक में और भी अधिक ले जाती है।

***

पहले मैंने कहा कि इस सत्य की अनुभूति करने के *कई* तरीक़े हैं जिसका वर्णन उपनिषदों में किया गया है तथा जिसके विषय में भगवान शिव श्रीगुरुगीता में इतने सुन्दर रूप में बताते हैं। इसलिए, आप पूछ सकते हैं कि निरन्तर बढ़ती प्रचुरता के भाव से, जो अच्छा है उसमें और भी अधिक वृद्धि करने के भाव से और जैसा कि कहावत है, 'सोने में सुगन्ध'—उसी तरह, पूजा करने के अतिरिक्त और कौन-से तरीक़े हैं जिनके द्वारा इस सत्य की अनुभूति की जा सकती है?

इसके लिए हम पुनः सिद्धयोग अभ्यासों को देख सकते हैं। और चूँकि नामसंकीर्तन का अभ्यास सभी को प्रिय है, हम विशेषरूप से इसी पर दृष्टि डालेंगे। नामसंकीर्तन हमें ईश्वर के नाद-स्पन्दन से जोड़ता है, उस स्पन्दन से जिसे श्रीगुरु की अपनी शक्ति ने हमारे अन्दर जाग्रत किया है और यह बात बड़ी अद्भुत है कि यही स्पन्दन हमारे अन्तर से प्रस्फुटित होता है। नामसंकीर्तन द्वारा निर्मित [या सम्भवतः अनावृत?] ध्वनि के बारे में सोचना बड़ा विलक्षण प्रतीत होता है। संसार में अनेक प्रकार की ध्वनियाँ हैं, परन्तु उनमें से सभी ध्वनियाँ मनुष्य को सुनाई नहीं देती हैं। कुछ ध्वनियों की आवृत्तियाँ [कम्पन] या तो बहुत ऊँची होती हैं या बहुत धीमी होती हैं जो हमें सुनाई ही नहीं देतीं, जिन्हें वैज्ञानिक अल्ट्रासोनिक [पराश्रव्य या कर्णातीत] या इन्फ़्रासोनिक [अवश्रव्य] कहते हैं। फिर भी, ये ध्वनियाँ चाहे

हमें सुनाई दें या न दें, इनमें से प्रत्येक का प्रभाव हमारी सत्ता पर एवं सम्पूर्ण विश्व पर होता है। कुछ ध्वनियाँ हमारी चेतना को उन्नत करती हैं; अन्य हमारी चेतना के लिए हानिकारक होती हैं। सिद्धयोग नामसंकीर्तन अद्वितीय है क्योंकि इसके स्पन्दनों में ध्वनि की *सभी* आवृत्तियाँ समाहित हैं। और दिव्य नाम में निहित पवित्रता के कारण तथा संकीर्तन करने वाले भक्तों के विशुद्ध भक्तिभाव के कारण इस ध्वनि से कोई हानि नहीं हो सकती। यह केवल स्वस्थ करती है, आरोग्य व स्फूर्ति प्रदान करती है और उत्थान करती है।

श्रीगुरु की सिखावनियों के प्रति हमारा प्रेम और उन सिखावनियों को अंगीकार करने की हमारी इच्छा व वचनबद्धता भी हमें इस बात को समझने में सम्बल प्रदान करेगी कि ईश्वर, चेतन आत्मा एवं श्रीगुरु एक ही हैं। श्रीगुरु ने हमें जो सिखाया है उससे प्राप्त परिष्कृत बोध व उच्चतर अभिज्ञान से, एक साधारण-सा क्षण ज्योतिर्मय हो उठता है, वह समयातीत हो जाता है, ऐसा विस्तृत हो जाता है मानो उस क्षण समय ही थम गया हो। उदाहरण के लिए, जब मैं चन्द्रमा की कला को क्रमशः बढ़ते देखती हूँ तो मैं, पहले जितनी देर तक उसे देखती थी, उसकी तुलना में आजकल कुछ अधिक देर तक उसे निहारती रहती हूँ क्योंकि इस छवि से मुझे गुरुमाई जी की वह सिखावनी याद आती है कि हम कैसे साधना के लिए चन्द्र-कलाओं की उपमा दे सकते हैं। मैंने गुरुमाई जी को यह कहते हुए सुना है कि चन्द्रमा का चाहे एक छोटा-सा अंश दिखाई दे या वह दूज का चन्द्र हो या वह पूर्णिमा का चन्द्र हो, वह फिर भी वही चन्द्रमा है। वह अब भी सूर्य से आलोकित होता है, और उसका कृष्ण पक्ष भी सूर्य के प्रकाश को अपने में समाए रखता है। इसी तरह, एक बार जब तुम्हें गुरुकृपा प्राप्त होती है तो तुम सदैव उस प्रकाश को धारण किए रहते हो। वह प्रकाश बदलता नहीं, और उसे क्षीण भी नहीं किया जा सकता। वह तुम्हारा है।

तो चाहे तुम्हारा ध्यान बहुत गहरा हो या अल्प, चाहे तुम्हारी मनोदशा ऊपर हो रही हो या नीचे, चाहे तुम्हें ऐसा लग रहा हो कि तुम्हारा जीवन योजनानुसार चल रहा है या तुम एक के बाद एक बाधाओं का सामना कर रहे हो, तुम हमेशा यह याद रख सकते हो : यह प्रकाश अनवरत है।

***

स्पष्ट शब्दों में कहें तो, श्रीगुरु व ईश्वर के साथ अपने सम्बन्ध के सच्चे स्वरूप को समझना व उसका अनुभव करना ही सिद्धयोग का पथ है। मैं यह स्वीकार करती हूँ कि यद्यपि हमारे पास इस अनुभव व समझ को प्राप्त करने के कई विकल्प हैं, फिर भी मैं पाती हूँ कि मुझे इस बात पर अधिक सोच-विचार करने की आवश्यकता नहीं है कि मैं इनमें से कौन-सा विकल्प चुनूँ। और इसका कारण यह है कि

सिद्धयोग पथ पर हम सत्संग में भाग ले सकते हैं। सत्संग में सब कुछ समाया हुआ है : श्रीगुरु की पूजा, श्रीगुरु की सिखावनियों का अध्ययन, श्रीगुरु द्वारा प्रदान किए गए अभ्यासों को करना और सतत मनन एवं आत्मसात्करण जिससे कि सत्संग का सार हमारी सत्ता का एक अंग ही बन जाता है।

हर वर्ष, जब जुलाई माह आता है तो मैं यह महसूस करने से स्वयं को रोक नहीं पाती हूँ कि यह माह सबसे अलग होगा, इसमें कोई विशेषता होगी। मुझे ऐसी कल्पना करना अच्छा लगता है कि इस समय के दौरान वातावरण के कण कोई नवीन रूप धारण करते हुए तीनों गुरुओं का सम्मान करने, उनका वन्दन-पूजन करने की तैयारी कर रहे हैं।

तो, हाँ : जुलाई का महीना मांगल्य से भरपूर होने वाला है। यह श्रीगुरु की कृपाशक्ति से पूरित व शोभायमान होने वाला है। पूर्णचन्द्र इसमें एक चुम्बकीय आकर्षण भर देगा। हमारे गुरुओं का सम्मान करने हेतु, उनका स्तुतिगान करने के महोत्सव में, सिद्धयोग पथ की वेबसाइट पर एक के बाद एक सिद्धयोग सत्संग के तत्त्व प्रस्तुत किए जाएँगे, जिनमें आप भाग ले सकते हैं। गुरुमाई जी जिस तरह उसका वर्णन कर रही हैं, वह मुझे बहुत पसन्द आया—शुभ गुरुपूर्णिमा के सम्मान में *महीने भर का सत्संग* ।

मुझे याद है, एक बार दर्शन के समय, श्रीगुरुमाई ने सत्संग को चन्द्रमा व ज्वार-भाटे की उपमा दी थी और अपने हाथों को ऊपर-नीचे करते हुए वे सुन्दरता से उठती-गिरती लहरों को दर्शा रही थीं। उन्होंने कहा, सत्संग तुम्हें अन्तर्मुखी करता है, और तब तुम बाह्य संसार में आगे बढ़ने के लिए सशक्त और सज्जित महसूस करते हो, उदाहरण के लिए, तुम अधिक आत्मविश्वास, और आत्म-उदारता से अपना जीवन जीते हो। साथ ही, तुम सदैव यह बात जानते हो कि तुम अपनी आत्मा की ओर वापस आ सकते हो जहाँ श्रीगुरु का प्रकाश वास करता है।

श्रीगुरुमाई से सत्संग के बारे में एक और बात जो मैंने सीखी वह है, कि यह श्वास-प्रश्वास के समान है। श्वास, पुनः वापस आने से पहले प्रश्वास में विलीन हो जाता है। यह श्रीगुरु के साथ प्रेम को साझा करने जैसा है—आप श्रीगुरु को प्रेम देते हैं और श्रीगुरु से प्रेम प्राप्त करते हैं और फिर श्रीगुरु से प्राप्त प्रेम, भक्ति में बदल जाता है और आप उसी भक्ति को श्रीगुरु के प्रति अभिव्यक्त कर उन्हें वह अर्पित करते हैं। आप देते हैं और प्राप्त करते हैं; आप प्राप्त करते हैं और देते हैं। इसमें प्रेम है, और अधिक प्रेम है; भक्ति है, और अधिक भक्ति है, और आपकी श्रीगुरु व आप एक-साथ होते हैं, और आपकी श्रीगुरु व आप एक हैं—और ये दो, यह एक, ये नूतन *आप* परम प्रेम में, गहन शान्ति के झूले में झूलते हैं।

जुलाई माह के हर दिन ऐसा ही होगा जब आप सिद्धयोग पथ की वेबसाइट के सत्संग हॉल में प्रवेश करेंगे। यह एक विशेष, जादूभरा अनुभव है, जो इन्द्रियों द्वारा अनुभव किया जा सकता है और साथ ही यह इन्द्रियातीत भी है; जो धरती के व आकाश के संगीत को, पराश्रव्य व अवश्रव्य ध्वनियों को अपने में समाए हुए है। प्रकाश के दोनों रूपों तक यानी दृश्य व अदृश्य प्रकाश तक इसका विस्तार है, इसमें वे रंग हैं जो हमने देखे हैं और वे रंग भी हैं जो हमारे स्वप्नजगत के मध्य विद्यमान हैं। सत्संग में, कुछ *घटित होता है।*

हो सकता है कि जब आप पहली बार वेबसाइट देखें तो आप सोचें कि उस दिन के सत्संग का जो भी तत्त्व है, उसके विषय में तो आपने पहले से ही पढ़ा है या सुना है या उसे किया भी है। इस तरह के जाने-पहचाने [और मैं 'बोरियत भरे' कहने का साहस करूँगी] विचारों के आधीन होने से पहले, आप क्या जानते हैं या क्या नहीं जानते इस बारे में अपनी पूर्व कल्पित धारणाओं को अपने ऊपर हावी होने देने से पहले, मैं चाहती हूँ कि आप मेरे साथ आएँ, और यदि आपने कुछ समय से इस बात पर ध्यान न दिया हो, तो मैं आपको स्मरण कराना चाहती हूँ कि आप 'एक नौसिखिए का मन' लेकर मेरे साथ आएँ।

इससे मेरा क्या तात्पर्य है? यही कि, मेरा सुझाव है कि आप सत्संग के तत्त्वों को इस तरह देखें जैसे आप उन्हें पहली बार सुन रहे हों, जैसे आप पहली बार उनके विषय में पढ़ रहे हों, जैसे आप उन्हें पहली-पहली बार कर रहे हों। ज़ेन संन्यासी शन्‌रिउ सुज़ुकी का प्रसिद्ध कथन है, "नौसिखिये के मन में कई सम्भावनाएँ होती हैं, किन्तु अनुभवी के पास कुछ ही।" जब हम यह सोच लेते हैं कि हमें जो सीखना था वह सब हमने सीख लिया है, यह कि एक ही बार करके हमें सारा ज्ञान प्राप्त हो जाएगा तो हम स्वयं को कितने अधिक सद्‌भाग्य से वंचित कर लेते हैं। हम और अधिक प्राप्त करने से स्वयं को रोक देते हैं। हम विस्मय के अपने सहज स्वभाव को दुर्बल कर देते हैं।

गुरुमाई जी ने कहा है, "महान विचारकों ने बताया है कि कैसे स्वतन्त्रता एक बार प्राप्त होने के बाद हमेशा के लिए तुम्हारी नहीं हो जाती। स्वतन्त्रता को हर क़दम पर पुनर्नवीन करना होता है, संरक्षित करना होता है। उसी प्रकार, ऐसा नहीं है कि तुम एक बार साधना करो और फिर हमेशा के लिए तुम्हें अपनी साधना का फल मिलता रहेगा। साधना को नित नवीन करने की ज़रूरत होती है, और साधना के फल को हर क़दम पर संरक्षित करने की ज़रूरत होती है। तुम्हें अपनी प्राप्ति की रक्षा करनी ही होगी।"

आप में से जो भारत के मन्दिरों में गए हैं, वे जानते हैं कि इष्टदेव के दर्शन के लिए आगे आते समय, प्रसाद के रूप में भगवान के आशीर्वाद ग्रहण करने के लिए आप अपनी खुली हथेलियों के ऊपर एक

शॉल या कपड़ा रख लेते हैं, आप उस प्रसाद को ग्रहण करने के लिए आँचल पसारते हैं। जब पुजारी उस प्रसाद को आपके आँचल में रखते हैं तो आप उसे अपने हृदय के पास लाकर, उसका आलिंगन करते हैं। नौसिखिए के मन के जैसी अभिवृत्ति बनाए रखना आपको तैयार करता है कि आप इसी तरह ग्रहण कर सकें। यह और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि जिस तरीक़े से आप श्रीगुरु के आशीर्वाद ग्रहण करते हैं, वह इस बात को प्रभावित करता है कि आप किस तरह अपनी भक्ति व सेवा श्रीगुरु को अर्पित करेंगे। जैसा आप ग्रहण करेंगे वैसा ही आप अर्पित करेंगे।

एक बार एक सिद्धयोगी ने मुझे एक कहानी सुनाई। उसका बेटा बहुत छोटा था, तब उसने श्रीगुरुमाई को जो उपहार भेजे थे उसके उत्तर में उसे गुरुमाई जी से धन्यवाद का एक सन्देश मिला। जब उसकी माँ ने उसे यह सन्देश बताया तब वह अपनी माँ की गोद में बैठकर भोजन कर रहा था। श्रीगुरुमाई के शब्द पढ़ते समय, उसने महसूस किया कि उसका बच्चा उसकी गोद में गहरे और भी गहरे बैठता जा रहा है, मानो वह द्रवित होता जा रहा हो। जब उसका सन्देश पढ़ना समाप्त हुआ, तब उस माँ ने बच्चे से पूछा कि क्या वह इसका उत्तर देना चाहता है। उसने कहा कि वह भोजन समाप्त करने के बाद श्रीगुरुमाई को उत्तर देगा।

भोजन के बाद, उसने अपना उत्तर लिखवाना शुरू किया। कुछ ही क्षण बाद वह रुक गया, ऐसा लगा कि उसका उत्तर पूरा हो गया है। तथापि, उसकी माँ को लगा कि उसके मन में कई भावनाएँ हैं जिन्हें वह गुरुमाई जी को बताना चाहता है। इसलिए उसने अपने बेटे को सुझाव दिया कि वह स्थान बदल ले—जैसे, पूजा-कक्ष में जाए। वह तुरन्त सहमत हुआ और सीढ़ियाँ चढ़कर पूजा-कक्ष की ओर गया।

वहाँ जाकर उसने श्रीगुरुगीता की पुस्तक उठाई, फिर यह बताने से पहले कि वह इसे पढ़ेगा, वह अपने ध्यान के आसन पर जाकर बैठ गया। उसकी माँ उत्सुकता से उसे देख रही थी, वह शान्त होकर अचानक ही श्रीगुरुगीता में खो गया। उसने पहली बार अपने बच्चे को इस स्तोत्र पर इतना ध्यान देते हुए देखा था; हालाँकि उसने अभी पढ़ने का अभ्यास शुरू ही किया था, पर ऐसा लग रहा था कि वह उसके शब्दों को आत्मसात् कर रहा हो, उन्हें ग्रहण कर रहा हो। यहाँ तक कि उसने कुछ शब्द गुनगुनाए भी।

कुछ समय बाद उसकी माँ ने पूछा कि क्या वह पुस्तक में जो ज्ञान है, उसे पढ़ रहा है। उसने हाँ कहा और नया उत्तर लिखवाना शुरू किया। वह बीच-बीच में पुस्तक को देखता, फिर ऐसा लगता मानो वह किसी सुदूर स्थान में पहुँचकर यह सोच रहा हो कि अब वह आगे क्या कहना चाहता है।

इसके फलस्वरूप उसका जो उत्तर था वह लम्बा था और उसमें एक विशेष मिठास, शरारत और गहराई थी। जब उसकी माँ ने वह उत्तर मुझे बताया, उसमें से दो पंक्तियों ने मेरा ध्यान आकृष्ट किया। पहली, उसने कहा : "गुरुमाई जी, मैं शक्तिपूरित महसूस कर रहा हूँ। आप मुझे शक्तिपूरित महसूस कराती हैं।" और दूसरी : "आपका प्रेम, मेरे प्रेम को ख़ूबसूरत बनाता है।"

यह देखकर मैं द्रवित हो गई कि इस छोटे-से बच्चे को—जो कि एक नौसिखिए के मन का उत्कृष्ट उदाहरण है—अन्दर से ही, श्रीगुरु के विषय में और श्रीगुरु की सिखावनियों के विषय में समझ थी। मेरे विचार से, श्रीगुरु को समर्पित इस माह में हमारे लिए यह याद रखना उपयुक्त होगा जो इस छोटे बालक ने अपनी शुद्धता व सरलता से तुरन्त ही ग्रहण कर लिया। यह श्रीगुरु का प्रकाश ही है जो हमें प्रकाशित करता है। यह श्रीगुरु का प्रेम ही है जो हमें प्रेम की अनुभूति कराता है।

***

यह मेरी हार्दिक इच्छा है कि आप अपने जीवन की व्यस्तताओं से—जादुई तरीक़े से, कैसे भी करके—समय निकालकर सिद्धयोग पथ की वेबसाइट पर सत्संग में भाग लें। इसे आप अपने लिए, व्यक्तिगत तौर पर होने वाली रिट्रीट मान सकते हैं, पूजा के लिए आपका अपना ख़ास समय मान सकते हैं। सत्संग। सत्य की संगति करना।

तो, माह भर चलने वाले इस सत्संग में क्या-क्या शामिल है? मैं आपको इस विषय में कुछ बातें बताना चाहूँगी। एक कहानी होगी, जिसे आप पढ़ व सुन सकते हैं, नामसंकीर्तन होगा जिसके साथ-साथ आप भी गा सकते हैं, श्रीगुरु के दर्शन करने व सिखावनियाँ प्राप्त करने का सुअवसर होगा। आप आरती गा सकेंगे, आप पूजा के अभ्यास एवं दक्षिणा अर्पित करने के बारे में, और अधिक जानेंगे।

तथापि, आप देखेंगे कि एक अभ्यास है जिसे सत्संग के मुख्य अभ्यास के रूप में, शामिल *नहीं* किया गया है, और वह है, सिद्धयोग ध्यान। यह बहुत सोच-विचार कर लिया गया निर्णय है। यदि आप पल भर के लिए विचार करेंगे तो मुझे विश्वास है कि आप इसके कारण का अनुमान लगा लेंगे।

आप अनुमान तो लगा ही सकते हैं, फिर भी, मैं स्वयं ही आपको इसका कारण बता देती हूँ। याद है, मैंने पहले कहा था कि सत्संग का प्रत्येक तत्त्व आपको अन्तर की ओर ले जाता है? ठीक, तो क्या ध्यान का मूल उद्देश्य यही नहीं है? अन्तर में प्रवेश करना।

जब आप ध्यान में अन्तर की ओर जाते हैं, आप एकत्व की अनुभूति करते हैं। जब आप ध्यान में अन्तर की ओर जाते हैं, तो आपको ऐसी शक्ति मिलती है कि आप बस अपने साथ बने रहें। माह भर चलने

वाले इस सत्संग में पूरे समय ध्यान होता रहेगा—जब आप एक कहानी सुनेंगे, जब आप श्रीगुरु की सिखावनियों का अध्ययन करेंगे, जब आप श्रीगुरु की स्तुति गाएँगे और जब आप आरती करेंगे। सत्संग के प्रत्येक तत्त्व के साथ आप अन्तर में ध्यान की शक्ति को सशक्त तथा विकसित करते जाएँगे और अपने आस-पास के प्रकाश-मण्डल को और भी विस्तृत करते जाएँगे।

यह सिद्धयोग ध्यान के साधकों के लिए श्रीगुरुमाई के निर्देशों के अनुरूप है। हाँ, यह महत्त्वपूर्ण है कि नियमित तौर पर ध्यान करने के अनुशासन का विकास किया जाए। साथ ही साथ, हम ऐसा करते हैं जिससे हम यह पहचान पाएँ कि ध्यान की डोर हमारे दैनिक जीवन के ताने-बाने में गुँथी हुई है, जिससे हम उस *शक्ति* के प्रति हमेशा जागरूक बने रहें और हम उसे शत-प्रतिशत स्पन्दित होता महसूस करते रहें। ध्यान की शक्ति आपके ध्यान-कक्ष तक ही या आप जहाँ भी ध्यान करते हों, वहीं तक सीमित नहीं है। जिस तरह आप शारीरिक व्यायाम करते हैं तो उससे प्राप्त शक्ति आपके शरीर का एक भाग बन जाती है, उसी तरह जब आप ध्यान का नियमित अभ्यास करते हैं, इसका फल आपकी सत्ता का ही एक भाग बन जाता है। श्रीगुरुमाई का संकल्प है कि जब आप सिद्धयोग पथ की वेबसाइट पर होने वाले सत्संग के प्रत्येक तत्त्व में भाग लें तो यह जागरूकता बनाए रखें। और इसके लिए अपने श्वास-प्रश्वास के प्रति जागरूक बने रहना महत्त्वपूर्ण है। आपकी प्राणशक्ति आपकी मार्गदर्शक ज्योति है।

श्रीगुरुगीता कहती है :

> ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम्।
> मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा॥

> ध्यान का मूल आधार है, श्रीगुरु की मूर्ति।
> पूजा का मूल है, श्रीगुरु के चरण।
> मन्त्र का मूल है, गुरु-वाक्य।
> मोक्ष का मूल है, श्रीगुरु की कृपा।[३]

श्रीगुरुमाई के प्रेम में,
ईशा सरदेसाई

© २०२२ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।

[१] श्रीभगवद्गीता २.२२।

[२] श्रीगुरुगीता, स्वाध्याय सुधा [चित्शक्ति पब्लिकेशन्स, २०१६], श्लोक ९, पृ. ३५;
अंग्रेज़ी भाषान्तर ©२०२२ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन।

३ श्रीगुरुगीता, स्वाध्याय सुधा [चित्शक्ति पब्लिकेशन्स, २०१६], श्लोक ७६, पृ. ५१ ।